फर्डिनेंड के बहाने

इंसान की पहचान और व्यक्तित्व निर्माण की उलझन पर बात

अनिल सिंह

एक स्तर पर हम यह मानते हैं कि हर बच्चा अनूठा होता है। शुरुआती कुछ वर्षों तक बच्चे के इस अनूठेपन को स्वीकारा भी जाता है, और सेलिब्रेट भी किया जाता है। जैसे-जैसे बच्चे बड़े होने लगते हैं, वयस्कों की और समाज की कोशिश होने लगती है कि बच्चे, उनसे जो अपेक्षित है, वही सीखें और करें। इस कहानी पर चर्चा के ज़रिए लेखक कहते हैं कि हर बच्चे को उसके अपने व्यक्तित्व, उसकी अपनी सोच के अनुसार विकसित होने देने की स्वतंत्रता देनी ही चाहिए। -सं.

हम जो हैं, जैसे हम सोचते हैं, व्यवहार करते हैं, वैसा ही क्यों करते हैं? क्या हम कुछ और भी हो सकते थे? क्या हमारा व्यवहार कुछ अलग भी हो सकता था? क्या हमने ख़ुद को हमारे लिए सोचे गए ढाँचों से अलग देखने की कोशिश की है? अगर किसी ने यह कोशिश की है तो हमने उसे किस तरह देखा है? ये कुछ मूल प्रश्न हैं जो शिक्षा से सीधे जुड़ते हैं। हर बच्चे में कुछ नैसर्गिक ख़ूबियाँ होती हैं, हर बच्चे की अपनी प्रतिभा होती है, उसे शिक्षक द्वारा पहचानना, उस बच्चे की उस प्रतिभा को निखारने के अवसर देना शिक्षक की ज़िम्मेदारी है। ये प्रतिभा, ये ख़ूबियाँ, उनके जेंडर, जाति, समुदाय, आदि से निरपेक्ष होती हैं। समाज अकसर प्रतिभाओं को पारम्परिक सोच के ढाँचे में बाँध देता है। स्कूल का, शिक्षकों का काम यह है कि वे उस ढाँचे को तोड़ बच्चे की नैसर्गिक प्रतिभा को निखरने दें। हर हुनर की एक ख़ुशबू है, हर व्यक्तित्व का एक सौन्दर्य है, बस वो किसी सोच के दायरे में क़ैद न हो, कोई घुटन न हो।

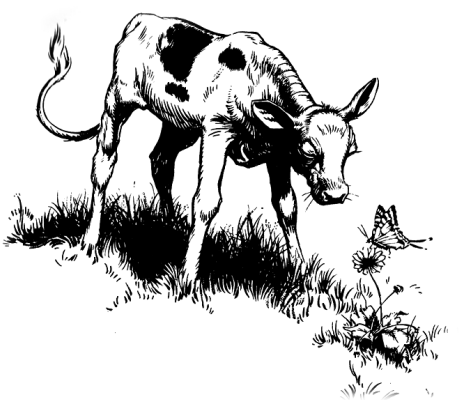

फर्डिनेंड की कहानी ऐसी ही एक कहानी है जो पारम्परिक छवि निर्माण के ढाँचे से इतर बात करती है। इस कहानी में संवेदनशीलता की, समझ की खिड़कियाँ खुलती हैं। बैल है तो ऐसा ही होगा, गाय होगी तो ऐसी ही होगी, स्त्रियाँ ऐसी होती हैं, पुरुष ऐसे होते हैं। लड़कों को ऐसे काम करने चाहिए, ऐसे खेल खेलने चाहिए। लड़कियों को इस तरह के काम करने चाहिए, ये ही खेल खेलने चाहिए। ऐसी तमाम पारम्परिक भूमिकाओं, व्यवहार के बारे में नए सिरे से सोचने की ओर इशारा करती है फर्डिनेंड की ये कहानी।

फर्डिनेंड एक बछड़ा है जो दुनिया के द्वारा उसके लिए निर्धारित तरीक़ों से नहीं, बल्कि

अपनी तरह से, अपनी मर्ज़ी से जीना चाहता है। वह छुटपन से ही चारागाह में अपने पसन्दीदा पेड़ के नीचे अपनी मनपसन्द जगह पर दिनभर बैठता है। फूलों की ख़ुशबू में डूबे रहना उसे पसन्द है। अपने हमउम्र बछड़ों की तरह उसे उछलना-कूदना, आपस में सींगें टकराना, और लड़ना-झगड़ना पसन्द नहीं। लेकिन बैलों के लिए तो यही तय है कि वे तगड़े और दमदार बनें, ताक़तवर और ग़ुस्सैल बनें, फुर्तीले और लड़ाका हों। उनके बड़े-बड़े नुकीले सींगों और तगड़ी माँसपेशियों को देखकर लोग उनसे ख़ौफ़ खाएँ।

यही इस कहानी की ख़ासियत है जो बताती है कि समाज किस तरह अपनी सोच को, अपेक्षा को एक व्यक्तित्व की गढ़न का ज़रूरी सामान बना देता है। कहानी सिर्फ़ फर्डिनेंड को बलशाली, लड़ाका और फुर्तीला होने को लेकर सामाजिक सोच के बारे में बात नहीं करती, बल्कि पूरे समाज के बारे में बात करती है जो एक बैल को दमदार लड़ाका ही देखना चाहता है कुछ और नहीं।

सोच की बाड़ेबन्दी को तोड़ने की कोशिश करती यह कहानी शिक्षा में काम करने वालों के लिए काफ़ी महत्त्वपूर्ण है।

इन दिनों हम क्या देखते हैं? किशोर उम्र के लड़के-लड़कियाँ अपनी पहचान और व्यक्तित्व निर्माण के संकट से जूझ रहे हैं। अव्वल तो उन्हें स्कूली शिक्षा ऐसा मौक़ा ही नहीं दे रही कि वे अपनी पसन्द, रुझान और नैसर्गिक स्वभाव के साथ आगे बढ़ पाएँ और अपनी तरह से जी पाएँ। फिर परिवार और व्यापक समाज की तरफ़ से उनपर दबाव है कि वे उनकी अपेक्षा के अनुरूप तैयार हों।

डॉक्टर, इंजीनियर, आईटी एक्सपर्ट, बिजनेस एक्सपर्ट, आईएएस, आईपीएस और आईएफ़एस की ही सारी क़वायद है। *नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* में विविध विकल्पों के प्रावधान हैं। राष्ट्रीय दस्तावेज़ में दिए इन विकल्पों के बाद भी स्कूल इन्हें खुलेपन के साथ स्वीकार नहीं कर पा रहे हैं। संगीतकला, माटीकला, चित्रकला, अभिनय, सिनेमा, साहित्य, रचनात्मक लेखन, कशीदाकारी, डिज़ाइनिंग, आदि स्कूली पाठ्यचर्या का ही हिस्सा हैं। लेकिन इसके लिए न तो स्कूलों की और न ही अभिभावकों की तैयारी दिखती है। रही-सही कसर कोचिंग संस्थानों के शिकंजे ने पूरी कर रखी है जो डॉक्टर, इंजीनियर और बिजनेस प्रोफ़ेशनल्स बनाने की मशीनें लगाकर बैठे हैं। इनके इतर जाने का रास्ता नहीं है। और अगर कोई रास्ता तलाशे भी तो वह अकेला और उपेक्षित पड़ जाने वाला है।

कहानी में फर्डिनेंड एक मज़बूत किरदार की तरह उभरता है। वह फूलों की ख़ुशबू के

साथ बड़ा होता है। है तो वह बैल ही, भरा-पूरा, हृष्ट-पुष्ट और तगड़ा बैल। लेकिन किसी को डराने या मारने के लिए नहीं। सींगें और आँखें तरेरने के लिए नहीं। सिर टकराने या पैरों से ज़मीन कुरेदकर अपनी बैलानगी दिखाने के लिए नहीं। वह एक बैल के रूप में शान्त और ख़ुश रहना चाहता है। जबकि उसके हमउम्र बैल अपने सिर टकराने, आपस में सींगें उलझाने और उछलकर ज़मीन कुरेदने वाले ख़ूँख़ार बैलों की तरह तैयार हुए हैं। वे इस आशा में हैं कि किसी दिन उनकी इसी बैलानगी को देखते हुए उन्हें मैड्रिड की प्रतिष्ठित बुल फाइटिंग के लिए चुना जाएगा। यह स्पेन में बैल जीवन की एक बड़ी उपलब्धि की तरह है।

लेकिन फर्डिनेंड को इसकी परवाह नहीं। वह हृष्ट-पुष्ट, तगड़ा और भरपूर बैल होने के बावजूद बुल फाइटिंग के लिए चुने जाने की कोई आकांक्षा नहीं रखता। पर हम अपने चारों तरफ़ क्या देखते हैं? नर्सरी की उम्र से ही बच्चों पर एक्स्ट्रा कैरिकुलर एक्टिविटी का बोझ लाद दिया जाता है। मसलन, स्केटिंग, स्विमिंग, कराटे, गिटार या सिंथेसाइज़र, या फिर फ़्रेंच या जर्मन भाषा सीखना। वह भी बच्चों की पसन्द या रुझान से नहीं, बल्कि अभिभावकों की महत्त्वाकांक्षा से। आरम्भिक स्कूल के दिनों से ही उसे कुछ बनाने के लिए सब उसपर दबाव बनाते हैं। बाज़ार ने तो इस मौक़े को ख़ूब भुनाया है।

ऐसे बहुत-से बच्चे हैं जो गणित, रसायनशास्त्र या अँग्रेज़ी विषय के साथ सहज नहीं हैं। उस विषय का ख़ौफ़ उन्हें असहज करता है। वे ख़ुश नहीं हैं। पर वे पूरी स्कूली शिक्षा में उस विषय को जबरन ढोने, और नाख़ुश रहते हुए भी निभाने को मजबूर हैं। वे बाक़ी सहपाठियों से अलग-थलग होकर पढ़ने और बढ़ने, अभिभावकों या शिक्षकों से अपने मन की बात कह पाने का साहस और निर्णय नहीं कर पाते। इस तरह के निर्णयों में अभिभावकों का सपोर्ट और स्कूल का खुलापन न होने के कारण बड़ी तादाद में किशोर उम्र के लड़के-लड़कियाँ अवसाद, तनाव और चिन्ता व नैराश्य जैसी मानसिक उलझनों का शिकार हो रहे हैं।

कहानी में फर्डिनेंड ख़ुश रहकर अपनी तरह से जीना चाहता है। यह अपनी तरह से जीना इतना मुश्किल क्यों बना दिया गया है? स्कूल बच्चों को उनकी पसन्द के अनुरूप गायक, रंगकर्मी, चित्रकार, कवि या शायर बनकर जीने के लिए तैयार कर पाने में क्यों असफल हैं?

फर्डिनेंड बनी-बनाई छवि को तोड़ता है। वह अपनी वैसी पहचान बनाता है जिसके साथ वह सबसे ज़्यादा ख़ुश है। उसका व्यक्तित्व ख़ुश, सन्तुष्ट और नैसर्गिक स्वभाव वाला है। वह अपने ऊपर किसी महत्त्वाकांक्षा का बोझ नहीं आने देता। उसमें किसी के जैसा बनने या किसी मुक़ाम पर पहुँचने की होड़ नहीं। बैलानगी का प्रदर्शन न करते हुए भी वह जन्मजात बैल है, लेकिन वह एक अलग हटकर पहचान अर्जित करता है।

मैड्रिड में बुल फाइटिंग के लिए सबसे तगड़े और बलिष्ठ बैल के रूप में चुन लिए जाने के बाद भी वह स्टेडियम में फाइट नहीं करता। पिकाडोर सिपाहियों के उकसाने के बावजूद वह बल प्रयोग नहीं करता। वह कोई प्रदर्शन नहीं करना चाहता। वह लड़ना नहीं चाहता। वह

सिर्फ़ इसलिए क्यों लड़े कि वह एक बलिष्ठ बैल है। उसे मैड्रिड की इस प्रतिष्ठित बुल फाइटिंग रिंग में एक ख़ूँख़ार और लड़ाका बैल होने का तमग़ा नहीं पहनना। वह स्टेडियम की दर्शक दीर्घा में बैठी महिलाओं के बालों में लगे फूलों की फैल रही ख़ुशबू लेना चाहता है। स्टेडियम के बीच शान्त बैठकर अपनी नाक उसी तरफ़ कर वह फूलों की ख़ुशबू से ख़ुश होना चाहता है। अन्ततः थक-हारकर बुल फाइटिंग के आयोजकों को उसे घर वापस भेजना पड़ता है।

फर्डिनेंड, कहानी को अपनी तरह से एक अनूठा और अप्रत्याशित मोड़ देता है, और उसका वैसा अन्त करता है जैसा वह चाहता है। लेखक मुनरो लीफ़ भी पूरी तरह से फर्डिनेंड के साथ हैं। स्कूल, अभिभावक और समाज से भी यह उम्मीद की जाती है कि वह फर्डिनेंड को अपनी तरह से बड़ा होने दें, अपनी तरह का बनने दें, और ख़ुश रहकर जीने में मदद करें।

कहानी की अन्तिम पंक्तियाँ कमाल की हैं। मुनरो लीफ़ लिखते हैं, "मुझे मालूम है कि इस सबके बाद फर्डिनेंड अभी भी चारागाह में पेड़ के नीचे अपनी पसन्दीदा जगह पर बैठा हुआ है, और ख़ामोशी से फूलों की ख़ुशबू ले रहा है। वह वाक़ई में बड़ा ख़ुश है!" यह ख़ुश रहना कितना अहम और ज़रूरी है! अपनी तरह का बन पाने की ख़ुशी। अपनी तरह से जी पाने की ख़ुशी।

फर्डिनेंड की कहानी न्यूयॉर्क के पेंगविन रेंडम हाउस के ग्रॉसेट एंड डनलप प्रकाशन छाप के माध्यम से 1936 में प्रकाशित हुई। यह मूलतः अँग्रेज़ी में है। लेखक मुनरो लीफ़ और चित्रकार रॉबर्ट लॉसन को इसके रचनाकार होने का श्रेय हासिल है। कहानी बहुत छोटी लेकिन बेहद दमदार है। रॉबर्ट लॉसन के बनाए ब्लैक एंड व्हाइट चित्र बेहद सजीव और एक्सप्रेसिव हैं। नब्बे के दशक में भारत ज्ञान विज्ञान समिति ने जन वाचन आन्दोलन के तहत इस किताब का हिन्दी अनुवाद कराकर प्रकाशित किया था। अरविन्द गुप्ता ने इसका हिन्दी अनुवाद किया। हिन्दी में तो यह किताब आउट ऑफ़ प्रिंट है, लेकिन इसे अरविन्द गुप्ता बुक्स के ऑनलाइन आर्काइव में जाकर देखा जा सकता है।

अनिल सिंह पिछले 20 बरसों से भी अधिक समय से सामाजिक क्षेत्र में सक्रिय हैं। गए 15 सालों से प्राथमिक शिक्षा ही उनका प्रमुख कार्यक्षेत्र है। सात सालों तक भोपाल में वैकल्पिक स्कूल के मॉडेल आनन्द निकेतन से जुड़े रहे और वहाँ भाषा व सामाजिक विज्ञान शिक्षण का काम किया। वर्तमान में पराग के लाइब्रेरी एजुकेटर कोर्स में बतौर फ़ैकल्टी जुड़े हुए हैं।

सम्पर्क : bihuanandanil@gmail.com